International Journal of Applied Science and Technology Research Excellence, Vol 13 Issue 2, March-April 2024
ISSN NO. 2250-2718(Print), 2250-2726(Online)

डॉ अम्बेड़कर द्वारा अस्पृश्यता का निवारण: एक अध्ययन

विजयलक्ष्मी
शोधार्थी, इतिहास विभाग, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, अस्थल बोहर, रोहतक
अंजना यादव
एसोसिएट प्रोफेसर, इतिहास विभाग, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, अस्थल बोहर, रोहतक

प्रस्तावना:

एक अग्रणी समाज सुधारक, कानूनी विद्वान और भारतीय संविधान के वास्तुकार डॉ. अंबेडकर ने छुआछूत की अमानवीय प्रथा को खत्म करने के लिए अपना जीवन समर्पित कर दिया। यह सार ऐतिहासिक संदर्भ, वैचारिक आधार और सामाजिक न्याय की उनकी निरंतर खोज में डॉ. अंबेडकर द्वारा अपनाई गई रणनीतिक पद्धतियों की पड़ताल करता है। प्राथमिक और माध्यमिक स्रोतों की एक विविध श्रृंखला पर आधारित, यह अध्ययन गहरी जड़ें जमा चुकी जाति व्यवस्था को चुनौती देने में कानूनी हस्तक्षेप, सामाजिक आंदोलनों और वैचारिक प्रवचनों सहित डॉ. अंबेडकर के बहुआयामी दृष्टिकोण का आलोचनात्मक मूल्यांकन करता है। इतिहास, समाजशास्त्र, कानून और राजनीति विज्ञान को शामिल करते हुए एक अंतःविषय के माध्यम से, इस अध्ययन का उद्देश्य अस्पृश्यता के उन्मूलन के लिए डॉ. अंबेडकर के संघर्ष की जटिलताओं और निहितार्थों में अंतर्दृष्टि प्रदान करना है, जो समकालीन सामाजिक-राजनीतिक विमर्श में इसकी स्थायी प्रासंगिकता पर प्रकाश डालता है।

मुख्य शब्द: डॉ. अंबेडकर, अस्पृश्यता, छुआछूत, सामाजिक आंदोलन

परिचय

भीमराव रामजी अंबेडकर (जन्म 14 अप्रैल 1891, महू, मध्य प्रदेश - मृत्यु 6 दिसंबर 1956), जिन्हें लोकप्रिय रूप से बाबासाहेब के नाम से भी जाना जाता है, एक भारतीय विधिवेत्ता, राजनीतिक नेता, दार्शनिक, विचारक, मानवविज्ञानी, इतिहासकार, वक्ता, विपुल लेखक, अर्थशास्त्री, विद्वान, संपादक, क्रांतिकारी और स्वतंत्र भारत के संस्थापकों में से एक थे। वे भारतीय संविधान की प्रारूप समिति के अध्यक्ष भी थे। अंबेडकर को 1990 में मरणोपरांत भारत रत्न, भारत के सर्वोच्च नागरिक पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। अन्य कई राष्ट्रीय नेताओं की तरह अंबेडकर को भी लोकतंत्र में पूरा भरोसा था। तानाशाही जल्दी परिणाम देने में सक्षम हो सकती है; यह अनुशासन बनाए रखने में प्रभावी हो सकती है लेकिन सरकार के स्थायी रूप के रूप में किसी की पसंद नहीं हो सकती। लोकतंत्र श्रेष्ठ है क्योंकि यह स्वतंत्रता को बढ़ाता है। लोगों का शासकों पर नियंत्रण होता है। लोकतांत्रिक सरकार के

विभिन्न रूपों में से, अंबेडकर ने संसदीय शासन प्रणाली को चुना। इस मामले में भी वे कई अन्य राष्ट्रीय नेताओं से सहमत थे। अंबेडकर लोकतंत्र को शांतिपूर्ण तरीके से बदलाव लाने के साधन के रूप में देखते थे। लोकतंत्र का मतलब केवल बहुमत द्वारा शासन या लोगों के प्रतिनिधियों द्वारा सरकार चलाना नहीं है। यह लोकतंत्र की एक औपचारिक और सीमित धारणा है। अगर हम इसे समाज के सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रों में व्यापक बदलाव लाने के तरीके के रूप में देखें तो हम लोकतंत्र के अर्थ को बेहतर तरीके से समझ पाएंगे।

अंबेडकर का लोकतंत्र का विचार सरकार की एक योजना से कहीं अधिक है। वे एक सर्वांगीण लोकतंत्र लाने की आवश्यकता पर जोर देते हैं। सरकार की योजना शून्य में मौजूद नहीं होती है; यह समाज के भीतर काम करती है। इसकी उपयोगिता समाज के अन्य क्षेत्रों के साथ इसके संबंधों पर निर्भर करती है। चुनाव, पार्टियां और संसद आखिरकार लोकतंत्र की औपचारिक संस्थाएं हैं। वे अलोकतांत्रिक माहौल में प्रभावी नहीं हो सकते। राजनीतिक लोकतंत्र का मतलब है 'एक व्यक्ति एक वोट' का सिद्धांत जो राजनीतिक समानता को दर्शाता है। लेकिन अगर उत्पीड़न और अन्याय मौजूद है, तो राजनीतिक लोकतंत्र की भावना गायब हो जाएगी। इसलिए, लोकतांत्रिक सरकार को लोकतांत्रिक समाज का विस्तार होना चाहिए। उदाहरण के लिए, भारतीय समाज में, जब तक जातिगत बाधाएं और जाति-आधारित असमानताएं मौजूद हैं, तब तक वास्तविक लोकतंत्र काम नहीं कर सकता। इस अर्थ में, लोकतंत्र का अर्थ है भाईचारे और समानता की भावना, न कि केवल एक राजनीतिक व्यवस्था। भारत में लोकतंत्र की सफलता केवल एक सच्चे लोकतांत्रिक समाज की स्थापना करके ही सुनिश्चित की जा सकती है। अंबेडकर लोकतंत्र की सामाजिक नींव के साथ-साथ आर्थिक पहलुओं को भी ध्यान में रखते हैं। यह सच है कि वे उदारवादी विचारों से बहुत प्रभावित थे। फिर भी, उन्होंने उदारवाद की सीमाओं की सराहना की। संसदीय लोकतंत्र, जिसमें उन्हें बहुत विश्वास था, की भी उन्होंने आलोचनात्मक जांच की। उन्होंने तर्क दिया कि संसदीय लोकतंत्र उदारवाद पर आधारित था। इसने आर्थिक असमानताओं को नजरअंदाज कर दिया और कभी भी दलितों की समस्याओं पर ध्यान नहीं दिया। इसके अलावा, पश्चिमी प्रकार के संसदीय लोकतंत्रों की सामान्य प्रवृत्ति सामाजिक और आर्थिक समानता के मुद्दों को नजरअंदाज करना रही है। दूसरे शब्दों में, संसदीय लोकतंत्र ने केवल स्वतंत्रता पर जोर दिया जबकि सच्चे लोकतंत्र का तात्पर्य स्वतंत्रता और समानता दोनों से है। यह विश्लेषण भारतीय संदर्भ में बहुत महत्वपूर्ण हो जाता है। भारतीय समाज अंग्रेजों से आजादी की मांग कर रहा था। लेकिन अंबेडकर को डर था कि राष्ट्र की आजादी सभी लोगों के लिए वास्तविक आजादी सुनिश्चित नहीं कर सकती। सामाजिक और आर्थिक असमानताओं ने भारतीय समाज को अमानवीय बना दिया है। ऐसे समाज में लोकतंत्र की स्थापना किसी क्रांति से कम नहीं होगी। यह सामाजिक संरचना और लोगों के दृष्टिकोण

में एक क्रांति होगी। वंशानुगत असमानता के स्थान पर भाईचारे और समानता के सिद्धांतों को स्थापित किया जाना चाहिए। इसलिए अंबेडकर ने सर्वांगीण लोकतंत्र के विचार का समर्थन किया। हम पहले ही देख चुके हैं कि अंबेडकर संसदीय शासन प्रणाली के पक्षधर थे। इस शासन प्रणाली के सफल संचालन के लिए कुछ अन्य शर्तों का पूरा होना भी आवश्यक है। सबसे पहले, संसदीय लोकतंत्र के प्रभावी संचालन के लिए राजनीतिक दलों का होना आवश्यक है। इससे विपक्ष का अस्तित्व सुनिश्चित होगा जो बहुत महत्वपूर्ण है।

संसदीय शासन को मुख्य रूप से उत्तरदायी सरकार के रूप में जाना जाता है क्योंकि कार्यपालिका पर विपक्ष की लगातार नज़र रहती है और वह उस पर नियंत्रण रखता है। सत्ता के लिए सम्मान और आधिकारिक स्थिति का मतलब है कार्यपालिका के पास पूर्ण शक्ति का अभाव। दूसरी शर्त है तटस्थ और गैर-राजनीतिक सिविल सेवा। तटस्थ सिविल सेवा का मतलब है कि प्रशासक स्थायी होंगे - राजनीतिक दलों के भाग्य पर निर्भर नहीं होंगे - और वे राजनीतिक दलों का पक्ष नहीं लेंगे। यह तभी संभव होगा जब सिविल सेवकों की नियुक्तियाँ राजनीतिक विचार के आधार पर नहीं की जाएँगी। लोकतंत्र की सफलता कई नैतिक और नैतिक कारकों पर भी निर्भर करती है। किसी देश का संविधान हो सकता है। लेकिन यह केवल नियमों का एक समूह है। ये नियम तभी सार्थक होते हैं जब देश के लोग संविधान के अनुरूप परंपराएं और परंपराएं विकसित करते हैं। लोगों और राजनेताओं को सार्वजनिक जीवन में कुछ मानदंडों का पालन करना चाहिए। इसी तरह, समाज में नैतिकता और कर्तव्यनिष्ठा की भावना भी होनी चाहिए। कानून और कानूनी उपाय कभी भी स्वैच्छिक जिम्मेदारी की भावना की जगह नहीं ले सकते। कोई भी कानून नैतिकता को लागू नहीं कर सकता। समाज में ईमानदार और जिम्मेदार व्यवहार के मानदंड विकसित होने चाहिए। लोकतंत्र तभी सफल हो सकता है जब हर नागरिक अन्याय से लड़ने के लिए कर्तव्यनिष्ठ महसूस करे, भले ही वह अन्याय उसे व्यक्तिगत रूप से किसी कठिनाई में न डाले। यह तब होगा जब समाज में समानता और भाईचारा मौजूद होगा। भारत में लोकतंत्र को सफल बनाने के लिए, अंबेडकर ने कुछ अन्य सावधानियां भी सुझाईं। लोकतंत्र का मतलब है बहुमत का शासन। लेकिन इसका परिणाम बहुमत का अत्याचार नहीं होना चाहिए। बहुमत को हमेशा अल्पसंख्यक के विचारों का सम्मान करना चाहिए। भारत में यह संभावना है कि अल्पसंख्यक समुदाय हमेशा एक राजनीतिक अल्पसंख्यक भी रहेगा। इसलिए, यह बहुत आवश्यक है कि अल्पसंख्यक स्वतंत्र, सुरक्षित और संरक्षित महसूस करें। अन्यथा, लोकतंत्र को अल्पसंख्यक के खिलाफ एक स्थायी शासन में बदलना बहुत आसान होगा। इस प्रकार जाति व्यवस्था लोकतंत्र के सफल संचालन में सबसे कठिन बाधा बन सकती है। निम्न दर्जे की मानी जाने वाली जातियों को सत्ता में कभी उचित हिस्सा नहीं मिलेगा। जाति स्वस्थ लोकतांत्रिक परंपराओं के विकास

में बाधा उत्पन्न करेगी। इसका मतलब यह है कि जब तक हम सामाजिक क्षेत्र में लोकतंत्र की स्थापना का कार्य पूरा नहीं कर लेते, तब तक केवल राजनीतिक लोकतंत्र जीवित नहीं रह सकता। अस्पृश्यता का उन्मूलन अस्पृश्यता को कैसे समाप्त किया जा सकता है? अस्पृश्यता पूरे हिंदू समाज की गुलामी का संकेत है। अगर अछूत खुद को सवर्ण हिंदुओं की जंजीरों में जकड़ा हुआ पाते हैं, तो सवर्ण हिंदू खुद धार्मिक ग्रंथों की गुलामी में रहते हैं। इसलिए अछूतों की मुक्ति में अपने आप ही पूरे हिंदू समाज की मुक्ति शामिल है। अंबेडकर चेतावनी देते हैं कि जाति के आधार पर कुछ भी सार्थक नहीं बनाया जा सकता। हम इस आधार पर न तो राष्ट्र का निर्माण कर सकते हैं और न ही नैतिकता का। इसलिए जातिविहीन समाज का निर्माण किया जाना चाहिए। अंतरजातीय विवाह जाति को प्रभावी रूप से नष्ट कर सकते हैं लेकिन मुश्किल यह है कि जब तक जातिवाद उनकी सोच पर हावी रहेगा, लोग अपनी जाति से बाहर विवाह करने के लिए तैयार नहीं होंगे। अंबेडकर अंतरजातीय भोजन या विवाह जैसे तरीकों को 'जबरन भोजन' के रूप में वर्णित करते हैं। जरूरत है एक और बड़ा बदलाव लाने की: लोगों को धार्मिक ग्रंथों और परंपराओं के चंगुल से मुक्त करना। हर हिंदू वेदों और शास्त्रों का गुलाम है। उसे बताया जाना चाहिए कि ये शास्त्र गलत करते हैं और इसलिए इन्हें त्यागने की जरूरत है। जातियों का उन्मूलन इन शास्त्रों की महिमा को नष्ट करने पर निर्भर है। जब तक शास्त्र हिंदुओं पर हावी रहेंगे, तब तक वे अपने विवेक के अनुसार काम करने के लिए स्वतंत्र नहीं होंगे। वंशानुगत पदानुक्रम के अन्यायपूर्ण सिद्धांत के स्थान पर हमें समानता, स्वतंत्रता और बंधुत्व के सिद्धांतों को स्थापित करना होगा। ये किसी भी धर्म की नींव होनी चाहिए।

हालाँकि, अंबेडकर जानते थे कि इस सब के लिए हिंदू धर्म में आमूलचूल परिवर्तन की आवश्यकता है, जिसमें बहुत लंबा समय लगेगा। इसलिए, बुनियादी परिवर्तन के इस सुझाव के साथ-साथ, उन्होंने अछूतों के उत्थान के लिए कई अन्य तरीकों पर भी जोर दिया। परंपरा के प्रभाव में अछूतों ने पूरी तरह से उच्च जातियों के वर्चस्व के आगे आत्मसमर्पण कर दिया था। उनमें लड़ने और खुद को मुखर करने का सारा जोश खत्म हो गया था। जन्मजात प्रदूषण के मिथक ने भी अछूतों के मन को काफी प्रभावित किया। इसलिए, उनके आत्म-सम्मान को जगाना जरूरी था। अछूतों को यह एहसास होना चाहिए कि वे सवर्ण हिंदुओं के बराबर हैं। उन्हें अपने बंधनों को खत्म करना होगा। अंबेडकर का मानना था कि शिक्षा अछूतों के सुधार में बहुत योगदान देगी। उन्होंने हमेशा अपने अनुयायियों को ज्ञान के क्षेत्र में उत्कृष्टता प्राप्त करने के लिए प्रेरित किया। ज्ञान एक मुक्तिदायी शक्ति है। शिक्षा मनुष्य को प्रबुद्ध बनाती है, उसे इस आत्म-सम्मान के बारे में जागरूक करती है और उसे भौतिक रूप से बेहतर जीवन जीने में भी मदद करती है। अछूतों के पतन का एक कारण यह था कि उन्हें शिक्षा के अधिकार से वंचित रखा गया था। अंबेडकर ने निम्न जातियों के बीच शिक्षा को पर्याप्त रूप से

प्रोत्साहित न करने के लिए शिक्षा पर ब्रिटिश नीति की आलोचना की। उन्हें लगा कि ब्रिटिश शासन के तहत भी शिक्षा मुख्य रूप से उच्च जातियों के एकाधिकार में ही रही। इसलिए, उन्होंने निम्न जातियों और अछूतों को संगठित किया और विभिन्न शिक्षण केंद्रों को वित्त पोषित किया। गवर्नर जनरल की कार्यकारी परिषद में एक श्रमिक सदस्य के रूप में, उन्होंने अछूत छात्रों को विदेश में शिक्षा के लिए छात्रवृत्ति प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। अंबेडकर चाहते थे कि अछूत उदार शिक्षा और तकनीकी शिक्षा दोनों से गुजरें। वह विशेष रूप से धार्मिक संरक्षण में शिक्षा के खिलाफ थे। उन्होंने चेतावनी दी कि केवल धर्मनिरपेक्ष शिक्षा ही छात्रों में स्वतंत्रता और समानता के मूल्यों को स्थापित कर सकती है। एक और बहुत महत्वपूर्ण उपाय जो अंबेडकर ने अपनाया वह यह था कि अछूतों को खुद को ग्राम समुदाय और उसके आर्थिक बंधनों से मुक्त करना चाहिए। पारंपरिक व्यवस्था में, अछूत विशिष्ट व्यवसायों से बंधे थे। वे अपने भरण-पोषण के लिए सवर्ण हिंदुओं पर निर्भर थे। यहां तक कि मामूली आय के लिए भी उन्हें खुद को सवर्ण हिंदुओं के वर्चस्व के अधीन करना पड़ता था। अंबेडकर को उनकी दासता के आर्थिक आयाम का एहसास था। इसलिए, उन्होंने हमेशा जोर दिया कि अछूतों को अपना पारंपरिक काम करना बंद कर देना चाहिए। इसके बजाय, उन्हें नए कौशल हासिल करने चाहिए और नए पेशे शुरू करने चाहिए। शिक्षा उन्हें रोजगार पाने में सक्षम बनाएगी। गाँव की अर्थव्यवस्था पर निर्भर रहने का कोई मतलब नहीं था। बढ़ते औद्योगीकरण के साथ, शहरों में अधिक अवसर थे। अछूतों को, यदि आवश्यक हो, गाँव छोड़ देना चाहिए और नई नौकरी ढूँढ़नी चाहिए या नए पेशे अपनाने चाहिए। एक बार जब सवर्ण हिंदुओं पर उनकी निर्भरता खत्म हो जाती है, तो वे अछूत होने के मनोवैज्ञानिक बोझ को आसानी से उतार सकते हैं। गांवों के यथार्थवादी मूल्यांकन में, अंबेडकर ने उन्हें 'स्थानीयता का एक गढ़, अज्ञानता, संकीर्णता और सांप्रदायिकता का अड्डा' के रूप में चित्रित किया। इसलिए, जितनी जल्दी अछूत गाँव की गुलामी से मुक्त हो जाएँ, उतना ही अच्छा है। भले ही अछूतों को गाँवों में रहना पड़े, उन्हें अपने पारंपरिक काम करना बंद कर देना चाहिए और आजीविका के नए साधन तलाशने चाहिए। इससे उनकी आर्थिक मुक्ति काफी हद तक सुनिश्चित हो जाएगी। अंबेडकर के तर्क का मुख्य आधार यह था कि उत्पीड़ित वर्गों को अपने बीच आत्म-सम्मान पैदा करना चाहिए। उनके उत्थान के लिए सबसे अच्छी नीति आत्म-सहायता की नीति थी। केवल कठोर परिश्रम करके और मानसिक दासता को त्यागकर ही वे शेष हिंदू समाज के बराबर का दर्जा प्राप्त कर सकते हैं। वे मानवतावाद, सहानुभूति, परोपकार आदि के आधार पर समाज सुधार में विश्वास नहीं करते थे। समान दर्जा और न्यायपूर्ण व्यवहार अधिकार का विषय था, दया का नहीं। दलितों को संघर्ष के माध्यम से अपने अधिकारों का दावा करना और जीतना चाहिए। अधिकारों की प्राप्ति का कोई छोटा रास्ता नहीं था।

इस दिशा में एक कदम के रूप में, अंबेडकर ने उत्पीड़ित वर्गों की राजनीतिक भागीदारी को बहुत महत्व दिया। उन्होंने बार-बार इस बात पर जोर दिया कि उपनिवेशवाद के संदर्भ में, यह अनिवार्य हो गया है कि अछूत खुद को राजनीतिक रूप से संगठित करके राजनीतिक अधिकार हासिल करें। उन्होंने दावा किया कि राजनीतिक सत्ता प्राप्त करके, अछूत सुरक्षा उपायों और सत्ता में एक बड़ा हिस्सा हासिल करने में सक्षम होंगे, ताकि वे विधायिका पर कुछ नीतियों को लागू कर सकें। ऐसा इसलिए था क्योंकि ब्रिटिश शासन के अंतिम चरण के दौरान, सत्ता के हस्तांतरण के सवाल के समाधान के लिए बातचीत शुरू हो चुकी थी। अंबेडकर चाहते थे कि अछूत अपने राजनीतिक अधिकारों का दावा करें और सत्ता में पर्याप्त हिस्सा प्राप्त करें। इसलिए, उन्होंने अछूतों के राजनीतिक संगठन बनाए। अपने पूरे जीवन में अंबेडकर ने हिंदू धर्म के दार्शनिक आधार को सुधारने का प्रयास किया। लेकिन उन्हें यकीन था कि हिंदू धर्म अछूतों के प्रति अपने रुख को नहीं बदलेगा। इसलिए, उन्होंने हिंदू धर्म के विकल्प की तलाश की। सावधानीपूर्वक विचार करने के बाद, उन्होंने बौद्ध धर्म को अपनाया और अपने अनुयायियों से भी ऐसा करने को कहा। बौद्ध धर्म में उनके धर्मांतरण का मतलब मानवतावाद पर आधारित धर्म में उनके विश्वास की फिर से पुष्टि करना था। अंबेडकर ने तर्क दिया कि बौद्ध धर्म सबसे कम रूढ़िवादी धर्म था। यह समानता और स्वतंत्रता की भावना को महत्व देता था। अन्याय और शोषण को हटाना बौद्ध धर्म का लक्ष्य था। बौद्ध धर्म को अपनाकर अछूत लोग अपने लिए एक नई पहचान बना सकेंगे। चूँकि हिंदू धर्म ने उन्हें केवल कष्ट ही दिए, इसलिए हिंदू धर्म को त्यागकर अछूत लोग अपने ऊपर लगे अस्पृश्यता के कलंक और बंधन को त्याग देंगे। एक नया भौतिक जीवन जीने के लिए उदार भावना के अनुरूप एक नया आध्यात्मिक आधार आवश्यक था। बौद्ध धर्म यह आधार प्रदान करेगा। इसलिए, सामाजिक स्तर पर शिक्षा; भौतिक स्तर पर आजीविका के नए साधन; राजनीतिक स्तर पर राजनीतिक संगठन और आध्यात्मिक स्तर पर आत्म-पुष्टि और धर्मांतरण ने अस्पृश्यता निवारण के लिए अंबेडकर के समग्र कार्यक्रम का गठन किया।

अंत में, अंबेडकर के विचारों की प्रासंगिकता क्या है? अपने जीवनकाल में अंबेडकर लगातार समकालीन मुद्दों पर प्रतिक्रिया दे रहे थे। इसलिए, पृथक निर्वाचिका या आरक्षण का उनका प्रचार, भाषाई राज्यों पर उनके विचार आदि का एक विशिष्ट संदर्भ है। केवल उन्हीं कार्यक्रमों को उठाना जो अंबेडकर को उन परिस्थितियों में उठाने पड़े और उनकी राजनीतिक विचारधारा का सार चित्रित करने का प्रयास करना गलत होगा। हमने देखा है कि अंबेडकर ने अन्याय और शोषण से मुक्त समाज की छवि को दृढ़तापूर्वक बनाए रखा। इसलिए, उन्होंने बार-बार घोषणा की कि एक आदर्श समाज स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व पर आधारित होगा। इन तीन सिद्धांतों के खिलाफ कौन सी ताकतें काम कर रही हैं? एक तरफ जातिवाद और सांप्रदायिकता और दूसरी तरफ आर्थिक शोषण भारतीय समाज में व्याप्त

असमानता को ताकत प्रदान करते हैं। अंबेडकर ने जाति-वर्चस्व और वर्ग-शोषण से मुक्त समाज के लिए लड़ाई लड़ी। जब तक शोषण की ये दो मशीनें - जाति और वर्ग - अस्तित्व में हैं, अंबेडकर के विचार उनके खिलाफ लड़ाई में एक प्रेरणा के रूप में प्रासंगिक रहेंगे।

सन्दर्भ ग्रंथ:

1. भास्कर भोला, लक्ष्मण। डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर: अनुभव अणि आठवाणी। नागपुर: साहित्य अकादमी, 2001.
2. सी गौतम बाबासाहेब अम्बेडकर का जीवन लंदन: अम्बेडकर मेमोरियल ट्रस्ट, 2000
3. क्रिस्टोफ़ जाफ़रलॉट अम्बेडकर और अस्पृश्यता: जाति का विश्लेषण और लड़ाई, 2005
4. डी सी अहीर डॉ. अम्बेडकर की विरासत दिल्ली: बी. आर. प्रकाशन।
5. डॉ. अम्बेडकर: ए क्रिटिकल स्टडी, नई दिल्ली: पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस।
6. "वीज़ा की प्रतीक्षा में" फ्रांसिस प्रिटचेट। कोलंबिया.edu. [डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (सं.) 2010 को पुनःप्राप्त]
7. जोहान्स; बेल्ट्ज़, एस जोंधले विश्व का पुनर्निर्माण: बी.आर. भारत में अम्बेडकर और बौद्ध धर्म, (नई दिल्ली) ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस
8. सुरेंद्र अजनात. इस्लाम पर अम्बेडकर, जालंधर: बौद्ध प्रकाशन। 1986
9. मनोबल गिराना और आशा: लोकतंत्र को कायम रखने के लिए सामाजिक आधार बनाना-डब्ल्यू जे फर्नांडो, बेसिल का एक तुलनात्मक अध्ययन। एन.एफ.एस. ग्रंडटविग (1783-1872) डेनमार्क और बी.आर. अम्बेडकर (सं.) 2000 भारत हांगकांग: एएचआरसी प्रकाशन।